International Journal of Multidisciplinary Trends

E-ISSN: 2709-9369
P-ISSN: 2709-9350
www.multisubjectjournal.com
IJMT 2021; 3(1): 226-227
Received: 07-01-2021
Accepted: 10-02-2021

डॉ. रंजना ग्रेवर
सह–आचार्य (संगीत), सी.एम.के. नेशनल पी.जी. गर्ल्ज कॉलेज, सिरसा, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
डॉ. रंजना ग्रेवर
सह–आचार्य (संगीत), सी.एम.के. नेशनल पी.जी. गर्ल्ज कॉलेज, सिरसा, हरियाणा, भारत

सांगीतिक वाघों में तत् वाघों का महत्व एवं वादन सामग्री

डॉ. रंजना ग्रेवर

सारांश
स्वर व ताल की अभिव्यक्ति करने वाले उपकरण भारतीय सगीत में वाद्य कहे जाते है। वाद्य एक ऐसा उपकरण है जो सगीतात्मक ध्वनि का बोध करवाता है वाघ शब्द बहुत ही व्यापक है इसकी सुनिश्चित परिभाषा किसी ग्रन्थ में नहीं मिलती फिर भी वाघ का तात्पर्य उस उपकरण से माना गया है। जिससे घर्षण, आघात फकूंने आदि की प्रक्रिया करने से ध्वनि उत्पन्न होती है। वैसे मनुष्य का शरीर भी वाघ के रूप मे नाद उत्पन्न करने का माध्यम बनता है। इसीलिए उसे शरीरी वीणा अथवा दैवी नाम दिए गए है। वाद्यो का वर्गीकरण, प्राचीन, मध्य व आधुनिक काल में क्या है? इसका अवलोकन किया है।

कुटशब्दः वाघ, वादन सामग्री, स्वर व ताल, दैवी

प्रस्तावना
वाघो का वर्गीकरण
वर्गीकरण किसी भी विषय मे प्रत्येक पक्ष को महत्वपर्णू बना देता है। विश्व सगीत के इतिहास में पुरातन समय के संगीतज्ञों द्वारा भारत मे ही सर्वप्रथम हाथों को वैज्ञानिक आधार पर वर्गीकरण, क्रमबद्ध रूप में रेखांकित करने का प्रयास किया गया है। उन्होनें सभी हाथो को मुख्य घाट वर्गों मे विभाजित किया, भले ही वह किसी भी राष्ट्र अथवा राष्ट्रीयता से सम्बन्धित हो। यह वर्गीकरण निम्नलिखित रूप मे है।

1. तन्त्र वाघ (तार वाले वाघ)
2. सुषिर वाघ (हवा के प्रवेश से ध्वनि की उत्पति करने वाले)
3. अवनद्ध वाघ (चमड़ाकृत वाघ)
4. धन वाघ (कांस आदि धातुओ से निर्मित वाघ) आधुनिक समय मे भी वाघो के वर्गीकरण का आधार वही चतुर्विध वर्गीकरण है। परन्तु इन वाघो की बनावट और वादन विधि के हिसाब से इनके आगे उपवर्ग बनाए जा सकते है। इन वाघ वर्गीकरण का एकमात्र उद्देश्य वादन 'सगीत मे तत् वाघो' की श्रेणी को रेखांकित करना ही है। चूंकि हमारा शोध कार्य व वाघों का महत्व ही है।

"तत् वाघो का महत्व" तत् शब्द तन धातु से निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है विस्तार करना। तत् धातु में त् प्रत्यय लगाकर ततम् शब्द बनता है। जिसका अर्थ है जिसमें स्वर व्याप्त हो ओर उसका विस्तार किया जाए। अतः ततम् शब्द वीणा सितार, सरोद, दिलरूबा, अथवा अन्य तारों या तन्तुओं में व्यापत स्वर का विस्तार करने वाले वाघो तथा जिनको बजाने के लिए कोण, गज या उंगली का प्रयोग किया जाता हो। वाघो के बिना संगीत शास्त्र के अस्तित्व की कल्पना भी सम्भव नहीं है। गायन तथा नृत्य की अपेक्षवादन् मे सगीतात्मक अभिव्यक्ति की सभांवना आनन्त है। लोक सगीत से लेकर शास्त्रीय सगीत तक एक तारा, रावण हत्या, जन्तर, कमाचचा, सरिन्दा, बनन, स्बाव, वीणा के विभिन्न प्रकार जैसे– सुरबहारे, सुर सिगांर, सितार, सरोद, सांरगी, इसराज, ताऊस, दिलरूबा, वायलिन, संतुर, सरमण्डल, तानपुरा इत्यादि तत् वाघो का वर्चस्व इन की प्रचलन से लेकर अब तक सर्वोपरि है।
डा0 सुरेश वृत राय तत् वाघो के महत्व को कुछ इस तरह से भी स्वीकारते हैः–
'नाद सागर आगाघ है। जिसे पार करना सरल नहीं है नाद सागर मे डूबने के भय से तैरना सीखने वालो की भान्ति स्वयं सरस्वती ने अपने पक्ष से दो तुम्बियो वाली वीणा लगा रखी है। जिससे वह नाद महासागर में सुरक्षित होकर संतरण कर सके। नादाध्धेः परे तार न जानाति सरस्वती, मज्जन अर्थात् अघादि तुब वहति वदासि।।
डूबने के भय से थे तुबा लेकर तैरने वालो की भान्ति वीणा का आश्राय लिए सरस्वती की जब यह दशा फिर सामान्य जनों की नया दशा होगी। इसका सहज अनुमान लगाया जा सकता है। गायन व नृत्य की अपेक्षा सुक्ष्यता तथा ध्वनिप्रधान होने के कारण वादना को स्थूल जगत से सुक्ष्म एवं अमूर्त नाद की यात्रा का अन्तिम सोपान माना जा सकता है। कंठ से निकले स्वर का स्थान निर्धारण प्रक्रिया द्वारा श्रुतियों का प्रत्यक्षीकरण वाधो पर ही संभव है। यह बात केवल सैद्धान्तिक नहीं है,

बल्कि भारतीय सगीत के अध्येता तथा सगीत के अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भारतीय संगीत के प्रतिनिधि विद्वान डा0 लाल मीण मिश्र ने प्रचलित रूद्र वीणा में आवश्यक परिवर्तन कर के सारणा प्रक्रिया द्वारा वीणा पर भरत के वज्ज् तथा मध्यम ग्राम के स्वरों सारणी चतुष्टयी द्वारा उद्भूत बाईस श्रुतियों तथा उनके अन्तरालों को वाघो पर स्पष्ट सुनने व परखने की विधि का सफल प्रयोग किया है। उनकी श्रुति वीणा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संगीत विभाग में सुरक्षित है। इसी प्रकार सारिकायुक्त वाघों पर सारिकाओ की सहायता से शुद्ध, कोमल तथा तीव्र स्वरों को वैज्ञानिक रीति से समझना तथा समझाना सम्भव है।

स्वरों की अन्दोलन संख्या, गुणान्तर अन्दोलन सख्या से लम्बाई निकालकर सर

स्थान, निर्धारण करना वाघो पर ही संभव है। श्री निवास अन्दोलन ने तारो की लम्बाई के विभिन्न भागो में शुद्ध व कोमल सर स्थान निश्चित करने तथा सारिकायों द्वारा निश्चित स्थानो को अंकित करने का प्रयोग वीणा पर किया। भरतकृत नाट्य शास्त्र मे ध्रुव तथा चल वीणा के माध्यम से तारत्व के अन्तर को स्पष्ट किया गया है।

इस दृष्टि से देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि तत्व वाघों पर ही स्वरों के स्थान–निर्धारण की प्रक्रिया सम्भव है। तत् वाघों के द्वारा सहायक नादों व अनुवादों इत्यादि के माध्यम से ध्वनि में एक समृद्धता आ जाती है। तत् वाघो के महत्व को समझाते हुए 3 असद अली खां साहब कहते है कि स्वरो की स्थापना और श्रुतियो की व्यवस्था सर्वप्रथम वीणा के स्वर पर ही की गई और प्रारम्भ से ही गायक कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन बिना वाघ की सगीत के सफल रूप मे प्रस्तुत नहीं कर सका। सबसे महत्वपर्ण बात यह है कि गायक गायन मे अपना मूल स्वर कायम रखने के लिए वाघो की सहायता लेता है। इस बात का प्रमाण किसी गायक के हाथ मे उसका तानपुरा है।

आप आगे कहते है कि प्रत्येक गले से निकलने वाली आवाज हर एक श्रुति का प्रकट करने में असमर्थ है। जबकि वाघों में यह समर्थत्व पाया जाता है। कई बार गले की कुछ कमियो को भी वाघ–सम्पूर्णता प्रदान करते है।

किसी गले से निकलने वाली आवाज का समर्थत्व तीन सप्तक या 3.5 सप्तक हो सकता है। परन्तु वाघो मे इसकी अधिकता 7.5 सप्तक तक का समर्थत्व रखने की बात भी कहते है। सगीत (मासिक) पत्रिका मे प्रकाशित विद्वान गायक एव सर्जक प0 जितेन्द्र अभिषेकी जी ने एक साक्षातकार में वाघों की श्रेष्ठता की बात कही है। कष्ठय् संगीत की बजाए वाघ सगीत की बजाए वाघ सगीत की अत्याधिक लोकप्रियता का कारण मुख्य रूप से उसकी वाक् विहीनता ही है। वाघ सगीत वाक् प्रधान न होने कारण विश्वजनीन भाषा व्यक्त करता है। वाघ सगीत में राग प्रस्तुतीकरण के अंत में जिस प्रकार की गति और लय का प्रदर्शन होता है। उस लय में सर्वसाधारण को भी झुमा देने की समर्थ निहित है।

''तत् वाघो की वादन सामग्री (प्राचीन–मध्य–आधुनिक काल) प्राचीन काल – प्राचीन काल में गायन के पोषण अथवा अतिरंजन के लिए वाघो का प्रयोग होता था, गायन के लिए की गई रचनाओ को ही वाघो पर बजाया जाता था, जैसे वरणम्, तिल्लना, कृति इत्यादि नाट्य शास्त्र में कही–2 तत्–वाघो के स्वतन्त्र वादन की चर्चा मिलती है। प्राचीन कालीन सगीत का जो स्वरूप आप हमारे सामने है उसकी सबसे बड़ी समस्या यह है कि स्वर लिपि के आभाव मे उसका हमे कोई निश्चित ढांचा नहीं बना पात। उदाहरण के लिए नाट्य शास्त्र मे जाति गायन उल्लेख है। यही जातियां वीणा पर भी केवल कल्पना कर सकते है। मध्य काल– मध्यकाल मे एक विशेष बात यह हुई कि 'वादन सगीत' की स्वतन्त्र परम्परा को अधिक महत्व दिया जाने लगा। तानसेन के पश्चात् उनकी वंश परम्पराओ में तन्त्री वाघो को बहुत ऊँचा स्थान दिया गया। इनके वशंजो ने तात ओर तार के बाजो मे बहुत उन्नति की। मध्यकाल के चर्चित गन्थ 'सगीत रत्नाकार' में वाघक्षरो का उल्लेख मिलता है। वाघाक्षरो के प्रयोग से यह कल्पना की जा सकती है कि वाघो की विशिष्ट रचनाएं उस काल में की जाती होगी। किन्तु वे रचनाएं क्या थी अथवा उनका स्वरूप क्या था। साक्ष्य रूप में इसका ज्ञान नहीं हो पाता। आधुनिक काल – आधुनिक काल की 18वीं शताब्दी में गायको तथा वादको के घराने बन चुके थे।

वादको में आधुनिक काल में स्वतन्त्र वादन को परम्परा का तीव्रता से विकास हुआ। 18वीं शताब्दी के आरम्भ मे उस्ताद् मसीत खाँ ने ध्रुवपद गायकी मे हेर–फरे कर के विलम्बित में तन्त्र बाज निकाला तो कालान्तर मे उस्ताद् रजा खां ने द्रुत लय में जवाबी बाज तैयार किया। गतों ने स्वतन्त्र वादन को नई दिशा प्रदान की।

सितार के सेनिया बाज वादक अपनी प्रस्तुति में 12 अगों का प्रयोग करते थे। आलाप, जोड़, गततोड़ा, लाड़ी, गुथ्थी, लड़ गुथ्थाव, लड़लपेट, कातर, तार, परन, झाला, ढाक झाला इत्यादि। यह कहने में काई अतिश्योक्ति नही कि गते अपना स्वतन्त्र अस्तित्व 18वीं शताब्दी के पश्चात् ही बना पाई।

19वीं शताब्दी तत् वाघों का ''स्वर्णिमी युग'' रहा यह कहने में काई अतिश्योक्ति नही। इस समय सितार वाघ अपने उन्नति के शिवर की ओर अग्रसर हो रहा था। अब तक इस वाघ के कई घराने अस्तित्व में आ चुके थे। इस समय में 30 अमृत सेन, ड0 इनायत खाँ, इमदाद खां, ड0 वरकतुल्ला खां और ड0 इल्लाही बख्श के नाम विशेष रूप से उल्लेखीय है। विषय की पुनरावृत्ति होगी इसलिए यहां यह सार संक्षेप में ही बात करना उचित होगा कि आधुनिक समय में गुणी जनो का मानना है कि सगीत अपनी शुद्धता से हटवार गलत दिशा की ओर जा रहा है और कालाकार आर्थिक व्यय के लिए जन साधारण की मात्र पर कुछ भी बदलाव करते है। युवा वर्ग का शास्त्रीय सगीत में रूचि लेना भी एक शास्त्रीय सगीत की उन्नति की ओर अग्रसर होता एक कदम है नई पीढी सगीत को समुचित एव व्यवस्थित रूप मे सीखना चाहती है आधुनिक समय में यह प्रयास कितने सफल होते है। यह आने वाला समय ही बताएगा।

संदर्भ

1. सारंगी डॉ सुरेश - व्रजराय
2. संगीत विशारद - बसंत
3. राग परिचय भाग २, ४ - हरिचन्द्र श्रीवास्तव अभिनन्द गीतांजलि